अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 13-Issue 04, (Oct-Dec 2025)

डॉ. बी.आर.अम्बेड्कर का शिक्षा–दर्शन

डॉ. देशराज सिरसवाल
प्रवक्ता, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
सैक्टर–46, चंडीगढ ।

भारतीय संविधान के निर्माता डॉ. बी.आर.अम्बेड्कर एक ऐसे राष्ट्रपुरुष हैं, जिन्होंने समूचे देश के संबंध में, इतिहास के सम्बन्ध में और भारतीय समाज के बारे महत्वपूर्ण विचार दिये हैं । वह एक लेखक, राजनीतिज्ञ, समाज–सुधारक, कानून–विशेषज्ञ, शिक्षा–शास्त्री और नव समालोचक के रूप में नयी पीढ़ी के सामने उदय हुए हैं । डॉ. बी.आर. अम्बेड्कर, गौतमबुद्ध, ईसा–मसीह, गुरुनानक देव, रविदास, कबीर, तुकाराम, ज्योतिराब फुले, पेरियार स्वामी, भगत सिंह जैसे सृजनात्मक व्यक्तियों में से एक हैं, जिन्हें हम भारतीय चिन्तन के सन्दर्भ में वास्तविक मानवतावादी चिन्तक कह सकते है।

आधुनिक युग में अम्बेड्कर का चिन्तन अमानवीय, अनैतिक एवं अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह एवं विरोध का सबसे सशक्त स्वर माना जाता है। बाल्यकाल से ही कठोर अनुभवों से गुजरते हुए डॉ. अम्बेडकर को अनेक सामाजिक बुराईयों एवं विड्म्बनाओं के साथ अपनी जीवन नियति से साक्षात्कार हुआ । गहन अध्ययन एवं उच्च शिक्षा के आधार पर उन्होंने सामाजिक अशुभ के प्रति अपनी आलोचनात्मक दृष्टि को एक विवेक–समस्त एवं तार्किक आधार प्रदान किया ।[1]

डॉ. अम्बेड्कर का जीवन एक विधार्थी के लिए आदर्श विधार्थी जीवन का उदाहरण है । वे दिन में 18 घंटे अध्ययन करते थे । विधार्थी काल में किए गये उनके परिश्रम जोकि उद्देश्यपूर्ण था, क्या हम ऐसे उद्देश्यपूर्ण जीवन के बारे में कभी चिन्तन करते हैं? क्या हमारी शिक्षा प्राप्ति का कोई मौलिक उद्देश्य हैं?

एक शिक्षक के रूप में उनकी मान्यता थी कि एक दलित वर्ग के विधार्थी को सामान्य श्रेणी के विधार्थी से ज्यादा परिश्रम करना चाहिए और एक आदर्श के रूप में अपने को प्रकट करना चाहिए । एक बार एक दलित विधार्थी उनसे सिफारिश करने आया, तो डॉ. अम्बेडकर ने उसे स्पष्ट कहा कि ‘‘माना कि मैं चाहूं तो यह संभव है पर मुझे यह शोभा नहीं देता । दूसरी बात, इस तरह किसी के लिए सिफारिश करना मुझे घृणास्पद लगता है । मेरी तो बल्कि यही धारणा है कि दलित विधार्थी की तरफ से ऐसा व्यवहार

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 13-Issue 04, (Oct-Dec 2025)

ही नहीं होना चाहिए जिस कारण उसकी अपनी बौद्धिकता और योग्यता में किसी प्रकार की हानि प्रकट होवे । मैं तो यह चाहता हूं कि वह दूसरे विधार्थियों की तुलना में एक आदर्श विधार्थी के रूप में अपना अस्तित्व स्थापित करें ।

नौजवानों को संबोधित करते हुए वह कहते है कि उन्हें अपनी जिन्दगी में ऊंचे उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आठों पहर प्रयत्न करते रहना चाहिए । यदि ऐसा नहीं है तो वह पशु से भी ज्यादा भयानक है । एक बार उन्हें जाकिर हुसैन कॉलिज में ''लोकतंत्र'' विषय पर बोलने के लिए बुलाया गया । गठिया से पीडित होते हुए भी उन्होंने दो विधार्थियों, जोकि निमन्त्रण देने के लिए आये थे, कहा, ''मैं एक बीमार आदमी हूं किन्तु विधार्थियों से बात करने से मुझे प्रेम है ।''[2] जिस दिन भाषण देना था, वे बड़ी मुश्किल से मंच तक आये, तब तक बीमार दिखाई दे रहे थे, लेकिन जब उन्होंने बोलना शुरू किया तो लगा कि उनको कोई कष्ट ही नहीं है। इसके दस महीनों के बाद ही उनका देहावसान हो गया था।

उपरोक्त विवरण से क्रमशः हमें उनके परिश्रम, ईमानदारी और कार्य के प्रति निष्ठा के उदाहरण मिलते हैं । वे कहते थे कि ''मेरी इच्छा थी कि मैं जिन्दगी भर विधार्थी बना रहूं ।'' उनका कहना था कि ''हमें यह विचार छोड देना चाहिए कि मां–बाप बच्चों को जन्म दे सकते हैं, पर किस्मत नहीं । वे उन्हें शिक्षा दिलाकर उनकी किस्मत को बना सकते है ।''[3] डॉ. अम्बेड्कर के अनुसार, ''ज्ञान आदमी के जीवन का आधार है।''[4] अतः हमें शिक्षा की तरफ विशेष सकारात्मक दृष्टिकोण रखना चाहिए । सन् 1849 में महात्मा ज्योतिबा फूले ने महिलाओं और शूद्रों की शिक्षा के लिए विद्यालय बनाये ओर एक आन्दोलन खड़ा किया ।[5] और उन्होंने शिक्षा की पहली किरण से उन्हें अवगत करवाया जबकि डॉ. अम्बेड्कर विधार्थियों के लिए एक आदर्श के रूप में उभरे ।

डॉ. अम्बेड्कर के अनुसार एक देश के लिए इन चार मूल्यों स्वतन्त्रता, एकता, बन्धुत्व और न्याय बहुत आवश्यक है।[6] उनके अनुसार, ''जिस समय में कुछ वर्गो के लोग, जो कुछ चाहें वह सब कर सकें और बाकि सब वह भी न कर सकें । जो उन्हें करना चाहिए, उस समाज के अपने गुण होंगे, लेकिन उनमें स्वतन्त्रता शामिल नहीं होगी। अगर इंसानों के अनुरूप जीने की सुविधा कुछ लोगों तक ही सीमित है, तब जिस सुविधा को आमतौर पर स्वतन्त्रता कहा जाता है, उसे विशेषाधिकार कहना उचित होगा ।''[7]

डॉ. अम्बेडकर का दर्शन समाज को समस्त अशुभ, एवं अभिशाप से मुक्त कर स्वाधीनता, समानता और भातृत्व पर आधारित समाज रचना के लिए प्रेरित करता है। विचार

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 13-Issue 04, (Oct-Dec 2025)

और व्यवहार दोनों ही स्तरों पर अम्बेड्कर असमानता, अस्पृश्यता, अशिक्षा, अंधविश्वास, अन्याय, अनैतिकता जैसे सामाजिक अशुभों एवं अभिशापों से लोहा लेते हैं एवं एक मानवीय, नैतिक एवं न्यायप्रिय समाज के निर्माण का आह्वान करते हैं । अम्बेड्कर एक ऐसे समाज के स्वप्न द्रष्टा थे जिसमें मनुष्य अपने विवेक से अंधविश्वासों का खंडन करता है समाज और प्रकृति के प्रति वैज्ञानिक एवं विवेकसम्मत दृष्टिकोण अपनाता है और धर्मशास्त्रों में क्या लिखा है, इसकी चिन्ता न करके मानवीय नैतिकता एवं न्याय के आदर्शो के अनुरूप व्यवहार करता है।[8]

जो शिक्षा अंधविश्वास, भाग्यवाद, संकीर्णता, प्रतिक्रियावाद जैसी कुरीतियों को ध्वस्त करती है, वह ग्रहण करने योग्य है। प्रतियोगी, व्यवसायिक, तकनीक और उपयोगी शिक्षा आज हमारे समाज की महत्वपूर्ण आवश्यकता है । हम अभी उन पौधों की नहीं सींच पाये है जो इन विचारकों ने लगाये थे । उनके सपनों को पूरा करने के लिए हममें कठोर संकल्प, ईमानदारी और प्रभावपूर्ण ढंग से काम करना होगा, तभी हम सही मायने में डॉ. बी.आर. अम्बेड्कर के शिक्षा दर्शन को समझने की बात कर सकते हैं ।

संदर्भ :

1. डॉ. ओम प्रकाश टांक, *रुा/ाछश्यकु एत्तरुश्र; श्र्टीश्यकु]* राजस्थान हिन्दी साहित्य आकादमी, जयपुर पृ. 125
2. आर.एस.हरित, ''लैक्चर ऑन द निर्वाण ड,'' *,न्श्ररु एुय रुाष्यरु रुाष्म एत्तरुश्र रुश्य पाष-एूर-रुारु- रुयएूरुॅकुरु]* पृ. 36
3. एस.के.खुशवाहा, *,न्श्ररु एुय रुाष्यरु रुाष्म एत्तरुश्र रुश्य पाष-एूर-रुारु- रुयएूरुॅकुरु]* पृ. 123
4. वही, पृ. 123
5. आर.एस. हरित और डॉ. एस.एन. गौतम, ''अनुसूचित जाति के आरक्षण का संक्षिप्त इतिहास'', *,न्श्ररु एुय रुाष्यरु रुाष्म एत्तरुश्र रुश्य पाष-एूर-रुारु- रुयएूरुॅकुरु]* पृ.110
6. प्रो. अंगने लाल, ''बाबा साहिब अम्बेड्कर आज के युग के समालोचक'', *,न्श्ररु एुय रुाष्यरु रुाष्म एत्तरुश्र रुश्य पाष-एूर-रुारु- रुयएूरुॅकुरु]* पृ. 54
7. बाबा साहेब अम्बेड्कर, *श्रच्इ.ाक ाड्ड-कू;]* ''अछूत वे कौन थे और अछूत कैसे हो गये?'' खंड–14, पृ. 68
8. डॉ. ओम प्रकाश टांक, *रुा/ाछश्यकु एत्तरुश्र; श्र्टीश्यकु*, पृ. 128